

## श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 22: चार कुमार

21 September 2026

### 🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



स्वर्ण सिंहासनो पर विराजमान तथा पवित्र अग्नियों के समान देदीप्यमान, चार सनातन-युवा ऋषि — सनक तथा उनके भ्राता — राजा पृथु को सर्वोच्च ज्ञान प्रदान करते हैं, जो उसे श्रद्धा से नत होकर ग्रहण करते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

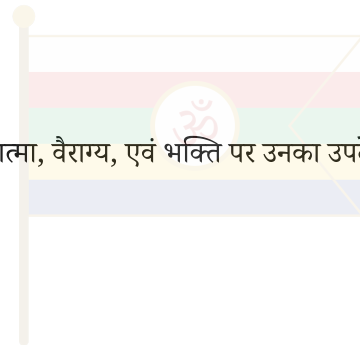
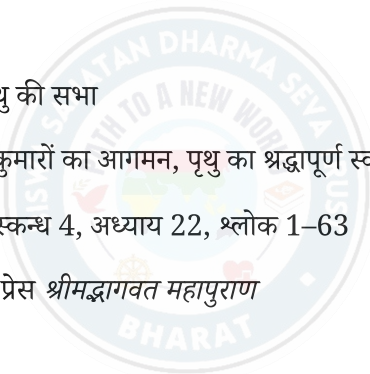
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में, राजा पृथु ने अपनी प्रजा को सिखाया कि शासन एक पवित्र धरोहर है और भगवान् की उपासना प्रत्येक आत्मा का सर्वोच्च कल्याण है। यह द्वाविंश अध्याय उस महान् गुरु को स्वयं एक विनम्र शिष्य बनते दिखाता है। जब प्रजा अब भी उनके गुणों की स्तुति कर रही है, चार

सनातन-युवा ऋषि — सनक, सनन्दन, सनातन, तथा सनत्कुमार, ब्रह्मा के मानस-पुत्र — उतरते हैं और उनकी सभा में आते हैं। पृथु तुरन्त उठ खड़े होते हैं और उन्हें परम श्रद्धा से ग्रहण करते हैं, उनकी पूजा करते तथा उन्हें स्वर्ण सिंहासनों पर बिठाते हुए। उनकी विनम्रता से प्रसन्न होकर, कुमार उन्हें आत्मा, वैराग्य, तथा एक राजा के — और प्रत्येक आत्मा के — जीवन के सच्चे प्रयोजन के रूप में परम भगवान् की भक्ति पर गहन ज्ञान प्रदान करते हैं। पृथु इस सबको गहरी कृतज्ञता से ग्रहण करते हैं, और तत्पश्चात् उसके सत्य को जीते हैं, अपनी समस्त सम्पदा के बीच अनासक्त, सूर्य की भाँति। यह बुद्धिमानों के समक्ष महान् जनों की विनम्रता का, और इस उपदेश का अध्याय है कि आत्मा का सम्पूर्ण कल्याण भगवान् से प्रेम में निहित है।

## अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 22 (द्वाविंश अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: चार कुमार राजा पृथु को उपदेश देते हैं
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपने उपदेश की निरन्तरता में (जिसमें पृथु तथा चार कुमारों के वचन उद्धृत हैं)
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: राजा पृथु की सभा
- केन्द्रीय विषय: चार कुमारों का आगमन, पृथु का श्रद्धापूर्ण स्वागत, तथा आत्मा, वैराग्य, एवं भक्ति पर उनका उपदेश
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 22, श्लोक 1-63
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



## पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 21 राजा पृथु को अपनी प्रजा को यह उपदेश देते हुए समाप्त हुआ कि शासक की शक्ति केवल उन्हीं के लिए एक धरोहर है जिनकी वह सेवा करता है, और भगवान् की भक्ति से बढ़कर कोई कर्तव्य नहीं। यह द्वाविंश अध्याय स्थिति को पलट देता है: महान् गुरु एक शिष्य बन जाते हैं, जब चार कुमार उन्हें उपदेश देने आते हैं — और उनकी महानता सबसे अधिक उस विनम्रता में प्रकट होती है जिससे वे उन्हें ग्रहण करते हैं।

## चार ऋषि आते हैं

जब प्रजा अब भी महाबली पृथु की स्तुति कर रही थी, चार ऋषि, सूर्य के समान तेजस्वी, उनकी सभा में आए — ब्रह्मा के सनातन-युवा मानस-पुत्र, सनक तथा उनके तीन भ्राता, लोकों में स्वच्छन्द विचरते हुए।

मैत्रेय उवाच

जनेषु प्रगृणत्स्वेवं पृथुं पृथुलविक्रमम् ।

तत्रोपजग्मुर्मुनयश्चत्वारः सूर्यवर्चसः ॥ १ ॥

*maitreya uvāca janeṣu pragṛṇatsv evaṁ pṛthum pṛthula-vikramam tatropajagmur munayaś catvāraḥ sūrya-varcasaḥ*

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: जब प्रजा पृथु के महान् पराक्रम का गुणगान करती रही, चार ऋषि, सूर्य के समान देदीप्यमान, उतरकर उनके समक्ष आ पहुँचे। (स्कन्ध 4, अध्याय 22, श्लोक 1)



चार सनातन-युवा ऋषि — सनक, सनन्दन, सनातन, तथा सनत्कुमार, ब्रह्मा के मानस-पुत्र — सूर्य के समान तेजस्वी उतरते हैं और राजा पृथु की सभा में आते हैं (श्लोक 1-5)।

## राजा का श्रद्धापूर्ण स्वागत

तुरन्त पहचानकर कि वे कौन हैं, पृथु अपने सिंहासन से उठे, और, अपने समस्त दरबार सहित, उन्हें ग्रहण करने आगे बढ़े, नीचे झुककर तथा श्रद्धा, चरण-जल, एवं प्रत्येक सम्मान से उनकी पूजा करते हुए। जब चार महान् ऋषि — भगवान् शिव के भी अग्रज — स्वर्ण सिंहासनों पर विराजमान हुए, वहाँ अपनी वेदियों पर पवित्र अग्नियों की भाँति देदीप्यमान, राजा ने, श्रद्धा तथा संयम से भरकर, प्रसन्नता से उनसे बात की, उनके आगमन के सौभाग्य के लिए वचनातीत कृतज्ञ।

हाटकासन आसीनान् स्वधिष्येष्विव पावकान् ।  
श्रद्धासंयमसंयुक्तः प्रीतः प्राह भवाग्रजान् ॥ ६ ॥

*hāṭakāsana āsīnān sva-dhiṣṇyeṣv iva pāvakān śraddhā-saṁyama-saṁyuktaḥ prītaḥ prāha bhavāgrajān*

अर्थ: जब वे स्वर्ण सिंहासनों पर विराजमान हुए, अपनी वेदियों पर पवित्र अग्नियों की भाँति देदीप्यमान, पृथु ने, श्रद्धा तथा संयम से भरकर, प्रसन्नता से भगवान् शिव के उन अग्रजों से बात की। (स्कन्ध 4, अध्याय 22, श्लोक 6)



महान् ऋषियों को पहचानकर, राजा पृथु उठते हैं, नीचे झुकते हैं, और उनकी पूजा करते हैं, उन्हें स्वर्ण सिंहासनों पर बिठाते तथा श्रद्धा एवं संयम से उनसे बात करते हुए (श्लोक 6-11)।

उन्होंने अपने सौभाग्य को स्वीकार किया कि ऐसे दुर्लभ तथा पवित्र अतिथि उनके द्वार आए, और विनम्रता से उनसे आत्मा के कल्याण के सबसे निश्चित मार्ग में उपदेश देने की याचना की, ताकि वे अपने जीवन की महान् धरोहर को व्यर्थ न करें (श्लोक 7-9)। उन्होंने कहा कि साधारण साधनों वाला घर भी धन्य हो जाता है जिस क्षण वह ऐसे अतिथियों को जल तथा आसन अर्पित करता है, जबकि सबसे भव्य घर भी, जो भगवान् के किसी भक्त के लिए कभी द्वार नहीं खोलता, विषैले सर्पों के बिल से बढ़कर कुछ नहीं (श्लोक 10-11)।

## कुमारों का उपदेश

कुमारों में ज्येष्ठ, सनत्कुमार, ने सर्वोच्च ज्ञान से उत्तर दिया, यह सिखाते हुए कि समस्त शास्त्रों का सम्पूर्ण लक्ष्य, ध्यान से विचारने पर, एक निश्चित वस्तु पर आ जाता है: आत्मा के प्रति दृढ़, अनासक्त प्रेम — वह आत्मा जो शरीर से भिन्न है — निर्गुण परम ब्रह्म के प्रति।

शास्त्रेष्वियानेव सुनिश्चितो नृणां  
क्षेमस्य सध्र्यग्विमृशेषु हेतुः ।  
असङ्ग आत्मव्यतिरिक्त आत्मनि  
दृढा रतिर्ब्रह्मणि निर्गुणे च या ॥ २१ ॥

*śāstreṣv iyān eva suniścito nṛṇāṃ kṣemasya sadhryag-vimṛśeṣu hetuḥ asaṅga ātma-vyatirikta ātmani dṛḍhā ratir brahmaṇi nirguṇe ca yā*

अर्थ: (ऋषियों ने सिखाया:) समस्त शास्त्रों में, ध्यान से विचारने पर, यही एक व्यक्ति के कल्याण का निश्चित कारण घोषित है — आत्मा के प्रति दृढ़, अनासक्त प्रेम, जो शरीर से भिन्न है, निर्गुण परम ब्रह्म के प्रति। (स्कन्ध 4, अध्याय 22, श्लोक 21)

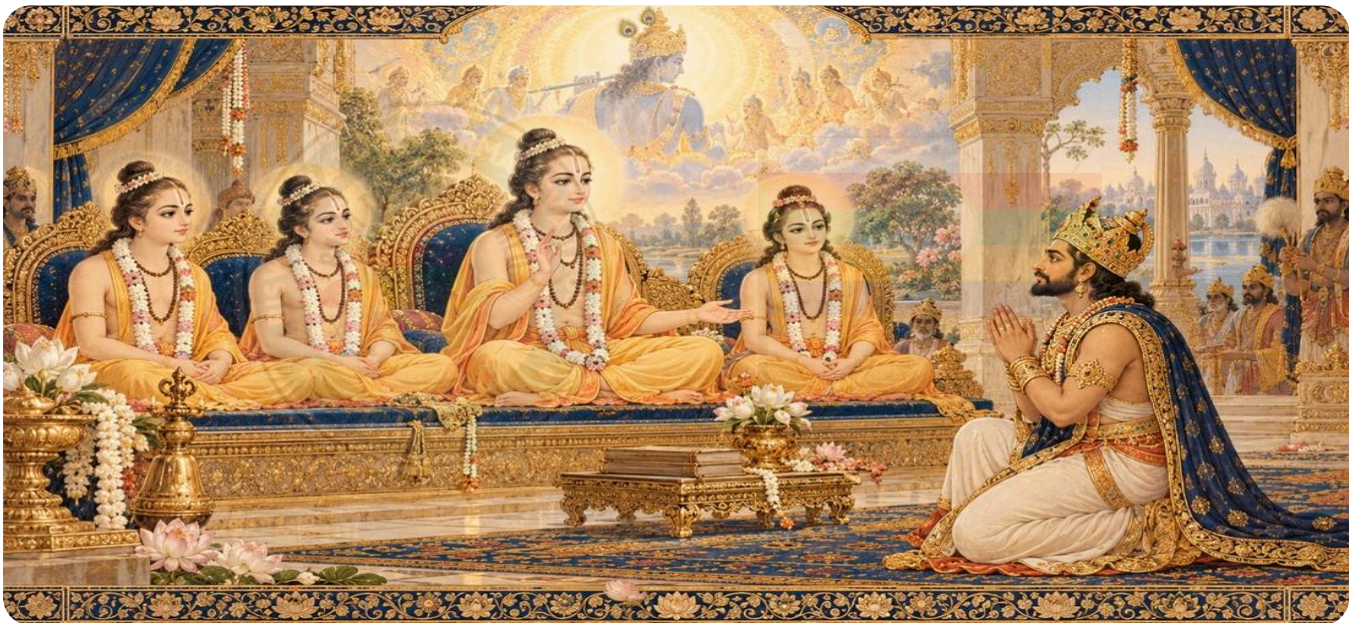
उन्होंने वैराग्य का मार्ग सिखाया: कि शरीर तथा इन्द्रिय-सुख से आसक्ति आत्मा को बाँधती है, जबकि विराग, आत्म-ज्ञान, और सबसे बढ़कर भगवान् के प्रति प्रेममयी भक्ति उसे मुक्त करती है। और उन्होंने सबसे गहन मूर्खता को नाम दिया — कि एक व्यक्ति के अपने सच्चे स्वार्थ की इससे बड़ी कोई विफलता नहीं कि वह अपनी आत्म-अनुभूति से किसी भी वस्तु को अधिक प्रिय माने।

नातः परतरो लोके पुंसः स्वार्थव्यतिक्रमः ।

यदध्यन्यस्य प्रेयस्त्वमात्मनः स्वव्यतिक्रमात् ॥ ३२ ॥

*nātaḥ parataro loke puṁsaḥ svārtha-vyatikramaḥ yad-adhy anyasya preyastvam ātmanaḥ svavyatikramāt*

अर्थ: अपनी आत्म-अनुभूति से बढ़कर किसी अन्य वस्तु को प्रिय मान लेना ही इस जगत् में मनुष्य के स्वार्थ की सबसे बड़ी विफलता है। (स्कन्ध 4, अध्याय 22, श्लोक 32)



ज्येष्ठ कुमार सर्वोच्च ज्ञान प्रदान करते हैं: कि आत्मा का सम्पूर्ण कल्याण आत्मा के प्रति दृढ़, अनासक्त प्रेम तथा परम भगवान् की प्रेममयी भक्ति में निहित है (श्लोक 21-44)।

ऋषियों ने आगे चेतावनी दी कि धन तथा इन्द्रिय-सुख के पीछे भागता जीवन आत्मा को वृक्षों तथा पाषाणों की-सी जड़ता की ओर खींच ले जाता है, जबकि सही दिशा में लगा जीवन अभी भी अज्ञान के सागर को पार कर सकता है। मनुष्य-जीवन के चार लक्ष्यों में से — धर्म, अर्थ, नियन्त्रित काम, तथा मोक्ष — उन्होंने पृथु से कहा कि केवल मोक्ष को ही गम्भीरता से लेना चाहिए, क्योंकि शेष तीन को अन्ततः मृत्यु ग्रस लेती है; मनुष्य अपने प्रयत्न से जो भी सम्पत्ति या स्वर्ग जीत ले, वह भी अन्ततः उसी भगवान् द्वारा विलीन कर दिया जाता है जिन्होंने उसे प्रदान किया था (श्लोक 33-36)।

तत्पश्चात् उन्होंने समझाया कि परम पुरुष प्रत्येक प्राणी के हृदय में, चर हो या अचर, स्वयं जीवात्मा के साथ ही विराजमान हैं — मानो एक ही निवास में दो सहचर। किन्तु यह निकटता, उन्होंने सावधान किया, एकत्व नहीं है: जो आत्मा स्वयं को परमात्मा समझ बैठती है वह उस व्यक्ति के समान है जो अन्धकार में रस्सी को सर्प समझ लेता है, और सम्यक् ज्ञान से जब यह भ्रम मिट जाता है, तब उस भगवान् की शरण लेने के अतिरिक्त कुछ शेष नहीं रहता, जो सदा प्रकृति की पहुँच से परे हैं (श्लोक 37-38)।

यहाँ कुमारों ने यह भेद खोला कि प्रेममयी भक्ति वहाँ क्यों सफल होती है जहाँ अन्य मार्ग संघर्ष करते रह जाते हैं। इन्द्रियों का आकर्षण नदी की तरंगों की भाँति सतत बहता रहता है, और जो दार्शनिक या योगी केवल उसे रोकने का प्रयत्न करता है, अन्ततः उसी में बह जाता है, क्योंकि किसी इच्छा को दबा देना उससे मुक्त हो जाने के समान नहीं। इसके विपरीत, भक्त को उस धारा से लड़ने की आवश्यकता ही नहीं: भगवान् की प्रेममयी सेवा हृदय को एक मधुरतर लालसा से भर देती है, और वे क्षुद्र धाराएँ उसी में डूबकर लुप्त हो जाती हैं (श्लोक 39)। इसलिए अज्ञान के उस सागर को पार करने का सबसे निश्चित मार्ग — जो जन्म-मृत्यु के मगरमच्छों से भरा है — तपस्वी का थकाने वाला परिश्रम नहीं, अपितु पहले से उपस्थित एक नौका है — भगवान् के पूजनीय चरण-कमल, जो उसे भी पार ले जाते हैं जो बस उस पर सवार हो जाए।

कृच्छ्रो महानिह भवार्णवमप्लवेशां

षड्वर्गनक्रमसुखेन तितीर्षन्ति ।

तत्त्वं हरेर्भगवतो भजनीयमङ्घ्रिं

कृत्वोदुपं व्यसनमुत्तर दुस्तरार्णम् ॥ ४० ॥

*kṛcchro mahān iha bhavārṇavam aplaveśāṁ ṣaḍ-varga-nakram asukhena titīṣṇanti tat tvaṁ harer bhagavato bhajānīyam aṅghriṁ kṛtvoḍupam vyasanam uttara dustarārṇam*

अर्थ: भौतिक अस्तित्व का यह सागर पार करना अत्यन्त कठिन है, और यह भयंकर मगरमच्छों से भरा है। इससे अकेले जूझने के स्थान पर, बस भगवान् के पूजनीय चरण-कमलों की नौका बना लो और सहज ही पार हो जाओ। (स्कन्ध 4, अध्याय 22, श्लोक 40)

अत्यन्त द्रवित होकर, पृथु ने सनत्कुमार के समक्ष प्रणाम किया और स्मरण किया कि स्वयं भगवान् विष्णु ने कभी यह भेंट होने की प्रतिज्ञा की थी; अब, उन्होंने कहा, बदले में अर्पित करने को उनके पास अपने समस्त अधिकार के अतिरिक्त कुछ शेष नहीं — अपना जीवन, अपना परिवार, अपना सिंहासन, तथा अपना कोष, जिसे उन्होंने ऋषियों के चरणों में निःसंकोच अर्पित कर दिया (श्लोक 41-44)। उन्होंने आगे कहा कि केवल वही वेद-ज्ञान में पारंगत व्यक्ति शासन के योग्य है, क्योंकि राजा तथा प्रजा समान रूप से ऐसे वेद-ज्ञानी गुरुओं की कृपा से जीवित रहते हैं और उन्हीं के मार्गदर्शन में चलना चाहिए; उन्होंने स्वीकार किया कि उनका कोई भी उपहार उन गुरुओं का ऋण कभी नहीं चुका सकता जिन्होंने ऐसा धन निःसंकोच बाँटा (श्लोक 45-47)। प्रसन्न होकर, चार ऋषियों ने राजा को आशीर्वाद दिया, समस्त सभा के समक्ष उनके चरित्र की प्रशंसा की, तथा ठीक वैसे ही आकाश में पुनः उठ गए जैसे वे आए थे (श्लोक 48-49)।

## पृथु उपदेश को जीते हैं

पृथु ने कुमारों के ज्ञान की केवल सराहना नहीं की; उन्होंने उसे जीया। उनकी यह स्वतन्त्रता कोई सहज वरदान नहीं थी, अपितु वही अनुशासन था जो ऋषियों ने उन्हें पहले ही दिखाया था: वे प्रत्येक कर्म का फल परमात्मा को अर्पित करते, कुछ भी अपने लिए न रखते, और उस निरन्तर समर्पण में वे — यद्यपि एक विशाल साम्राज्य के गृहस्थ शासक — उसी आन्तरिक वैराग्य में स्थित रहे जिसमें कोई संसार को पूर्णतः त्याग

चुका सन्न्यासी रहता है (श्लोक 50-51)। यही था, न कि अपने कर्तव्यों से किसी पलायन ने, जिसने उन्हें अपने साम्राज्य के पूर्ण वैभव का शासन, भरण-पोषण, तथा उपभोग उस अहंकार के बिना करने दिया जो सामान्यतः स्वामित्व के साथ आता है। यद्यपि वे एक सम्पूर्ण साम्राज्य की पूर्ण भव्यता के बीच घर में रहे, वे कभी इन्द्रियों के विषयों में आसक्त न हुए; अहंकार से रहित, वे अपनी ही सम्पदा से अछूते रहे, सूर्य की भाँति — जो सबको प्रकाशित तथा गर्म करता है फिर भी किसी से मलिन नहीं होता।

गृहेषु वर्तमानोऽपि स साम्राज्यश्रियान्वितः ।

नासज्जतेन्द्रियार्थेषु निरहंमतिरर्कवत् ॥ ५२ ॥

*gṛheṣu vartamāno 'pi sa sāmrajya-śriyānvitaḥ nāsajjatendriyārtheṣu niraham-matir arkavat*

अर्थ: यद्यपि वे एक सम्पूर्ण साम्राज्य की भव्यता के बीच घर में रहे, पृथु, अहंकार से रहित, कभी इन्द्रियों के विषयों में आसक्त न हुए — अछूते, सूर्य की भाँति। (स्कन्ध 4, अध्याय 22, श्लोक 52)



पृथु ऋषियों के उपदेश को जीते हैं: यद्यपि साम्राज्य की भव्यता से घिरे, वे अहंकार से रहित तथा इन्द्रिय-सुख से अनासक्त रहते हैं, उस सूर्य की भाँति अछूते जो सबको प्रकाशित करता है फिर भी किसी से मलिन नहीं होता (श्लोक 45-63)।

उन्होंने धर्मपूर्वक शासन किया, भगवान् की उपासना की, और अपनी प्रजा की देखभाल की, फिर भी उनका हृदय सदा उसकी पहुँच से परे रहा जो उनके पास था। इस प्रकार द्वाविंश अध्याय एक ऐसे राजा के साथ समाप्त होता है जो एक साम्राज्य का स्वामी तथा बुद्धिमानों का विनम्र शिष्य दोनों है — और जिसका सच्चा धन वह वैराग्य तथा भक्ति है जो कुमारों ने उसे सिखाई। यह हमें अगले अध्याय के लिए तैयार करता है, जहाँ पृथु, समय की पूर्णता में, संसार से पूर्णतः मुड़कर भगवान् को खोजेंगे।

## इस अध्याय को प्रमुख शिक्षाएँ

1. सचमुच महान् बुद्धिमानों के समक्ष विनम्र रहते हैं। पृथु, एक सम्राट् तथा स्वयं एक महान् गुरु, चार ऋषियों की पूजा करने उठते हैं और सिखाए जाने की याचना करते हैं। महानता सीखने से इनकार करने से नहीं बल्कि ज्ञान ग्रहण करने की विनम्रता से सिद्ध होती है (श्लोक 6-11)।
2. आत्मा का सम्पूर्ण कल्याण एक वस्तु में निहित है। कुमार समस्त शास्त्रों को एक बिन्दु में निचोड़ देते हैं: आत्मा तथा निर्गुण परम ब्रह्म के प्रति दृढ़, अनासक्त प्रेम। अनेक उपदेश उस एक आवश्यक वस्तु पर मिल जाते हैं (श्लोक 21)।
3. आत्म-अनुभूति की उपेक्षा से बुरी कोई भूल नहीं। आत्मा के सच्चे भले से किसी वस्तु को अधिक प्रिय मानना, ऋषि कहते हैं, स्वार्थ की सबसे बड़ी विफलता है। हम स्वयं को बहुत अधिक चाहकर नहीं बल्कि गलत वस्तुओं को अधिक चाहकर नष्ट करते हैं (श्लोक 32)।
4. जीवन के चार लक्ष्यों में से केवल मोक्ष ही गम्भीरता से लेने योग्य है। धर्म, अर्थ, तथा नियन्त्रित काम — तीनों अन्ततः मृत्यु द्वारा ग्रस लिए जाते हैं; केवल मोक्ष नहीं (श्लोक 34-36)।
5. भक्ति इच्छा से लड़ती नहीं — वह उसे एक मधुरतर वस्तु से आप्लावित कर देती है। ज्ञानी तथा योगी इन्द्रियों की तरंगों से संघर्ष करते हैं और प्रायः बह जाते हैं; भक्त बस हृदय को एक बड़े प्रेम से भर देता है, और क्षुद्र धाराएँ उसी में लुप्त हो जाती हैं। इसीलिए कुमार भगवान् के चरण-कमलों को अज्ञान के सागर को पार करने की सबसे सुलभ नौका कहते हैं (श्लोक 39-40)।
6. सच्चा वैराग्य कर्म का फल भगवान् को अर्पित करना है, कर्म से पलायन नहीं। पृथु एक शासक सम्राट् बने रहे फिर भी एक सन्न्यासी जितने ही आन्तरिक रूप से मुक्त जीवित रहे, क्योंकि उन्होंने प्रत्येक फल परमात्मा को समर्पित किया, स्वयं के लिए दावा नहीं किया (श्लोक 50-52)।

## एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

एक ऐसे राजा को देखने में एक शान्त महानता है जिसने अभी-अभी अपनी सम्पूर्ण प्रजा को सिखाया, और ठीक अगले दृश्य में घुटनों पर एक शिष्य बन जाता है। पृथु के पास शक्ति, ज्ञान, तथा एक राज्य की श्रद्धा है — और जिस क्षण चार पवित्र ऋषि आते हैं, वे उठते हैं, झुकते हैं, उनके चरण धोते हैं, और सिखाए जाने की याचना करते हैं। यही वह विनम्रता है जो महानता को अभिमान में बदलने से रोकती है: यह ज्ञान कि हमने चाहे कितना ही सीखा हो, सदा कोई अधिक बुद्धिमान है, और कि जो हम जानते हैं उसका सर्वोच्च उपयोग सीखते रहना है। और जो उपदेश वे पाते हैं वह एक भक्तिपूर्ण जीवन के ठीक केन्द्र तक जाता है। कुमार उन्हें सौ नियम नहीं देते; वे उन्हें एक वस्तु देते हैं — कि आत्मा का सम्पूर्ण कल्याण परम के प्रति अनासक्त प्रेम में निहित है — और एक चेतावनी: कि कोई वस्तु हमें इतनी निश्चित रूप से नष्ट नहीं करती जितनी किसी अन्य वस्तु को भगवान् की अपनी अनुभूति से ऊपर मानना। हममें से अधिकांश भगवान् को खुलकर अस्वीकार नहीं करते; हम बस, चुपचाप, अन्य वस्तुओं को अधिक अत्यावश्यक, अधिक सुखद, अधिक वास्तविक पाते रहते हैं। अध्याय इसे कोमलता से समस्त विफलताओं में सबसे बड़ी नाम देता है। और फिर वह हमें विकल्प दिखाता है, स्वयं पृथु में साकार: एक जीवन जो संसार में पूर्णतः जीया गया — शासन करते, कार्य करते, प्रबन्ध करते — फिर भी एक ऐसे हृदय के साथ जो, सूर्य की भाँति, उस सबसे ऊपर विश्राम पाता है जिसे वह स्पर्श करता है। यह भी ध्यान दें कि ऋषियों का सबसे मुक्तिदायी वचन क्या है: हमसे यह नहीं कहा जाता कि हम अपनी इच्छाओं को बलपूर्वक दबा दें, जैसे

संघर्षरत तपस्वी प्रायः असफल होकर करता है; हमसे बस इतना कहा जाता है कि हम एक मधुरतर प्रेम को उन्हें आप्लावित कर लेने दें, जैसे एक नौका किसी यात्री को उस जल के पार ले जाती है जिसे वह स्वयं कभी तैरकर पार न कर पाता। यही वह स्वतन्त्रता है जो ऋषि सिखाते हैं, और राजा जीते हैं: समस्त वस्तुओं को धारण करना, और किसी से न चिपकना, क्योंकि हृदय पहले ही भगवान् को दिया जा चुका है।

## एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, “सूर्य की भाँति” होने का अभ्यास करें — प्रत्येक वस्तु में उपस्थित, किसी से आसक्त नहीं। एक ऐसी गतिविधि चुनें जो आप वैसे भी करेंगे — अपना काम, एक भोजन, एक वार्तालाप, एक कर्तव्य — और उसे पूर्णतः तथा भली प्रकार करें, किन्तु भीतर से उसे हल्के से धारण करें, उसे इन शब्दों के साथ भगवान् को अर्पित करते हुए — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय”, जैसे पृथु ने अपना साम्राज्य धारण किया। जैसे आप दिन बिताते हैं, उन वस्तुओं पर ध्यान दें जिन्हें आपको “अपनी आत्म-अनुभूति से अधिक प्रिय” बनाने का प्रलोभन होता है — कोई चिन्ता, कोई लालसा, कोई शिकायत — और, कुमारों की चेतावनी को स्मरण करते हुए, उन्हें कोमलता से भगवान् के प्रति अपने प्रेम से ऊपर के बजाय नीचे रखें। और ऋषियों का स्वागत करते पृथु की भावना में, आज पढ़ने या संग में बुद्धिमानों का कोई वचन खोजें, और उसे विनम्रता से ग्रहण करें, जैसे एक सम्राट् ने कभी चार युवा ऋषियों का ज्ञान ग्रहण करने घुटने टेके।

## उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का द्वाविंश अध्याय महान् राजा पृथु को बुद्धिमानों का एक विनम्र शिष्य बनते दिखाता है। जब प्रजा अब भी उनकी स्तुति कर रही है, चार सनातन-युवा कुमार — सनक तथा उनके भ्राता, ब्रह्मा के मानस-पुत्र — उनकी सभा में आते हैं। पृथु तुरन्त उठते हैं, उनकी पूजा करते हैं, और उन्हें स्वर्ण सिंहासनों पर बिठाते हैं, और विनम्रता से आत्मा के कल्याण में उपदेश देने की याचना करते हैं। सनत्कुमार सर्वोच्च ज्ञान से उत्तर देते हैं: कि समस्त शास्त्र एक ही बिन्दु पर सिमट जाते हैं — शरीर से परे आत्मा तथा निर्गुण परम ब्रह्म पर स्थिर, दृढ़ तथा अनासक्त प्रेम; कि अपनी आत्म-अनुभूति से बढ़कर किसी वस्तु को महत्त्व देने से गहरी कोई विफलता नहीं; कि धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष में से केवल मोक्ष ही मृत्यु द्वारा नहीं मिटाया जाता; और कि भक्ति इच्छा से केवल तपस्वी की भाँति संघर्ष नहीं करती, अपितु उसे एक मधुरतर लालसा में डुबो देती है, आत्मा को अज्ञान के सागर के पार वैसे ही ले जाती है जैसे नौका किसी यात्री को तट तक ले जाती है। कृतज्ञता से अभिभूत होकर, पृथु ऋषियों को अपना सम्पूर्ण साम्राज्य तथा जीवन अर्पित करते हैं, और वे उन्हें आशीर्वाद देकर पुनः आकाश में उठ जाते हैं। वे जो कुछ सीखा उसे पूर्णतः जीते हैं, अपने साम्राज्य पर शासन करते हुए भी प्रत्येक कर्म भगवान् को समर्पित करते हैं, तथा उसकी पूर्ण भव्यता के बीच अछूते रहते हैं, सूर्य की भाँति। यह समापन अध्याय प्रत्येक पाठक के समक्ष वही चयन रखता है जो कभी एक सम्राट् के समक्ष रखा गया था — ज्ञान को अपने तक सीमित रखना, या उसे पृथु की भाँति ग्रहण करना, पहले घुटनों के बल झुककर, और फिर उसे पूर्णतः जिये गए जीवन में।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

## सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, द्वाविंश अध्याय।

- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · बिश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: [kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-4-chapter-22-the-four-kumaras-instructing-prithu-hi.html](http://kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-4-chapter-22-the-four-kumaras-instructing-prithu-hi.html)

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

